



Date:31-08-23

Peril on the high seas

The debate on Katchatheevu is likely to turn intense before the general election.

S. Ganesan

A series of brutal mid-sea attacks by assailants, suspected to be from Sri Lanka, has left fishers in Tamil Nadu seething with anger. The community has been searching for an end to the violence on the high seas, which has remained a threat to their lives and livelihood for about four decades now.

In recent months, Indian fishers venturing into the sea on small fibreglass boats have come under intermittent attacks. Strangely, the attackers have been unidentified persons in civilian clothes. Indian fishers say the assailants usually come on high-speed boats, hem in their fibreglass boats, and assault the fishers with wooden logs, iron rods and other weapons before snatching away their catch, expensive fishing gear, and navigational equipment.

In the latest attacks on August 21 and 22, groups of fishers from Nagapattinam district were assaulted and robbed while they were fishing about 15-22 nautical miles off the Vedaranyam coast. At least 15 of them needed hospitalisation. The assailants came in batches of six to 10 in two or more boats. In another incident, the fishing nets of four Indian fishers were wantonly damaged. A fisherman, who escaped with minor injuries, said the attacks mostly happen during nights after the fishers cast their nets so that they cannot flee quickly.

The Vedaranyam Marine Police have since registered five cases on charges of attempted robbery, dacoity, and attempt to cause death or grievous hurt against 46 unidentified Tamil and Sinhalese-speaking Sri Lankan nationals.

Chief Minister M.K. Stalin wrote a letter to the Minister of External Affairs, S. Jaishankar, drawing his attention to the assault on Indian fishermen, allegedly by “Sri Lankan nationals.” Besides asking Mr. Jaishankar to intervene at the earliest and request the Sri Lankan authorities to take decisive action against the assailants, Mr. Stalin also reiterated the need for pursuing diplomatic channels to find a lasting solution to the issue.

The AIADMK, while condemning the attacks, also accused the State government of failing to do enough to protect the interests of the fishing community. The party general secretary, Edappadi K. Palaniswami, called for strengthening the Coastal Security Group of the Police to safeguard the fishers. After a similar attack in February, the State BJP President K. Annamalai too had written to Mr. Jaishankar seeking action.

The decades-old fisheries conflict between India and Sri Lanka has claimed the lives of several fishers from Tamil Nadu. Representatives of fishermen in Tamil Nadu accuse the Sri Lankan Navy of injuring hundreds of fishermen over the years. Talks between the two countries at the government level and

fisher level have not resulted in a durable solution. Indian mechanised trawlers continue to face the wrath of the Sri Lankan Navy, as evident from the sporadic arrests of fishermen, for allegedly straying beyond the International Maritime Boundary Line. In July and August, for instance, 15 fishers from Rameswaram and 10 from Akkarapettai were arrested and their boats seized. Though the arrested fishermen are released after court proceedings in Sri Lanka, reclaiming the fishing vessels is a tedious process. Most seized fishing vessels are destroyed by the ravages of time.

Many fishers and politicians believe that retrieving Katchatheevu, an uninhabited and barren 285-acre islet which was ceded to Sri Lanka in 1974, could offer a lasting solution. It is contended that the ceding of the islet, located about 14 nautical miles off Rameswaram, has effectively shrunk the fishing area for Indian fishers.

Mr. Stalin has sought to revive the debate on Katchatheevu by demanding the retrieval of the islet. He had urged the Centre to raise the issue with Sri Lankan president Ranil Wickremesinghe during the latter's visit to New Delhi in July. More recently, while addressing a fishermen conference in Mandapam in Ramanthapuram, he said that retrieving the islet would put a permanent end to the problems of fishermen. He was also at pains to dispel the notion that the DMK was a party to the ceding of the islet. He said that the DMK, in fact, organised agitations against the agreement between India and Sri Lanka and recalled how former Chief Minister M. Karunanidhi tabled a special resolution in the Legislative Assembly against the islet being given to Sri Lanka.

As the general election draws closer, the debate is likely to turn intense as the fishing community accounts for a solid vote bank.



Date: 31-08-23

बेरोजगारी की मार सबसे ज्यादा युवाओं पर है

संपादकीय



लाल किले से प्रधानमंत्री ने कहा था कि भारत में युवाओं की संख्या विश्व में सबसे ज्यादा है और एक स्वर्णिम भविष्य उनकी प्रतीक्षा कर रहा है। सीएमआईई के इकोनॉमिक आउटलुक के आंकड़ों से पता चला कि पिछले सात वर्षों में देश में 65 लाख रोजगार घटे, जबकि सांख्यिकी के नियम के अनुसार सात करोड़ (हर साल एक करोड़) अतिरिक्त युवा रोजगार के लिए खड़े हो गए। वर्ष 2016-17 में कुल 41.27 करोड़ लोग रोजगार में थे लेकिन 2022-23 में इनकी संख्या घट कर 40.58 करोड़ हो गई। इसमें 15-30 आयु वर्ग के

युवाओं को सबसे बड़ा झटका लगा है क्योंकि उनका रोजगार इस कालखंड में सवा तीन करोड़ कम हुआ यानी 25% से घटकर 17% हो गया। हां, इस बीच 45-60 आयु वर्ग के लोगों में रोजगार 37 से 49% हो गया। युवा शक्ति तभी फलीभूत हो सकती है, जब देश उनके मानसिक और शारीरिक श्रम का सही इस्तेमाल करे। देश में हर साल एक करोड़ नए युवाओं का जॉब मार्केट में खड़े हो जाना और वह भी उस मार्केट में जहां पहले से करोड़ों बेरोजगार बैठे हों-योजनाकारों को पीएम के वादे की याद दिलाता रहेगा। उन्हें सोचना होगा कि गलती कहां हो रही है ? अगर जीडीपी के आंकड़े प्रोत्साहित करने वाले हैं तो रोजगार क्यों कम हो रहे हैं? यह रिपोर्ट नीति सुधार का वेकअप कॉल है।



दैनिक जागरण

Date:31-08-23

युवाओं को राजनीति से जोड़ने की चुनौती

राहुल वर्मा, (लेखक सेंटर फार पालिसी रिसर्च में फेलो और राजनीतिक विश्लेषक हैं)

संसदीय चुनाव में उतरने की आयु सीमा घटाने की चर्चा राजनीतिक गलियारों में काफी समय से चल रही है। यह मुद्दा बहुत जोर-शोर से तो नहीं, लेकिन यदाकदा सतह पर आ ही जाता है। आगामी आम चुनाव से पहले यह मुद्दा फिर चर्चा में है। संसद की कार्मिक, लोक शिकायत, कानून और न्याय मामलों की समिति के सुझाव से इस बहस ने फिर जोर पकड़ा है। सुशील कुमार मोदी के नेतृत्व वाली इस समिति ने चुनाव लड़ने के लिए न्यूनतम आयु सीमा 25 वर्ष को घटाकर 18 वर्ष किए जाने की बात कही है। इससे पहले दिसंबर, 2022 में जयंत चौधरी ने संसद में इस विषय पर निजी सदस्य विधेयक पेश किया था। हालांकि, चुनाव आयोग ने आयु सीमा घटाने के इस प्रस्ताव पर सहमति नहीं जताई है। चुनाव लड़ने के लिए आयु सीमा घटाने की वकालत करने वालों का तर्क है कि इससे राजनीति में युवाओं की भागीदारी बढ़ेगी और चूंकि भारत युवा आबादी वाला देश है तो युवाओं का प्रतिनिधित्व बढ़ाया जाना आवश्यक है।

दुनिया के कई लोकतांत्रिक देश ऐसे हैं, जहां 18 साल की आयु में चुनाव में उतरा जा सकता है। कनाडा, ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी, स्विट्जरलैंड और आस्ट्रेलिया ऐसे कुछ प्रमुख देश हैं, जहां 18 साल का पड़ाव पार करते ही चुनाव लड़ने की अर्हता प्राप्त हो जाती है। वहीं, अमेरिका के कुछ राज्यों, ब्राजील और इंडोनेशिया में 21 वर्ष की आयु सीमा चुनाव लड़ने के लिए न्यूनतम आयु वर्ग के रूप में स्वीकार्य है। इसके उलट भारत में यह 25 वर्ष है। जबकि भारत उन देशों में रहा है, जहां स्त्री और पुरुषों में कोई भेदभाव किए बिना आरंभ से ही सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार की परंपरा अपनाई गई। फिर मताधिकार के लिए न्यूनतम आयु सीमा को 1989 में 21 से घटाकर 18 वर्ष किया गया। साथ ही ड्राइविंग सरीखे कई अन्य कार्यों के लिए 18 वर्ष की आयु को मानक मान लिया गया। इसलिए चुनाव में उतरने के लिए आयु सीमा घटाने के लिए आवाज उठाई जाती है। ऐसे में यह पड़ताल जरूरी है कि क्या इससे वाकई कुछ फायदा होगा या फिर मौजूदा व्यवस्था ही बेहतर है?

इसमें कोई संदेह नहीं कि युवाओं को राजनीति से जोड़ना किसी भी दृष्टि से श्रेयस्कर होगा। इससे नीति निर्माण में उनकी आकांक्षाओं की सहज रूप से अभिव्यक्ति हो सकेगी। भारतीय राजनीति और चुनावों में युवाओं की भागीदारी को समझने के लिए कुछ रुझानों पर नजर डालना बहुत उपयोगी होगा। वर्ष 2014 में करीब 9,500 तो 2019 में 10,000 उम्मीदवारों ने लोकसभा चुनाव लड़ा। इनमें से महज पांच प्रतिशत उम्मीदवार ही 25 से 30 वर्ष की आयु वर्ग के थे। वर्ष 2014 के लोकसभा चुनाव में 25 से 30 वर्ष आयु वर्ग के 32 उम्मीदवार ही ऐसे थे, जिन्हें पांच प्रतिशत से अधिक वोट मिले। जबकि 2019 में ऐसे 26 उम्मीदवार रहे जिन्हें पांच प्रतिशत से अधिक मत प्राप्त हुए। यदि जीत की बात करें तो 2014 में 11 और 2019 में आठ सांसद ही ऐसे जीतकर आए, जिनकी आयु 25 से 30 साल के बीच थी। इन आंकड़ों के निहितार्थ निकाले जाएं तो यही बात सामने आती है कि एक तो 25 से 30 वर्ष की आयु वर्ग वाले बहुत ज्यादा प्रत्याशी चुनाव में उतर नहीं रहे और उतर भी रहे हैं तो जीत नहीं पा रहे। जो चुनाव में उतरने के साथ जीत भी रहे हैं उनमें से अधिकांश राजनीतिक परिवारों से आते हैं।

पिछले कुछ लोकसभा चुनावों की तस्वीर देखें तो संसद की औसत आयु 53 से 54 वर्ष के बीच निकलकर आएगी। यह स्पष्ट रूप से संकेत करती है कि संसद जैसी विधायी संस्था में युवा आबादी का प्रतिनिधित्व बढ़ना चाहिए। आखिर क्या कारण है कि ऐसा नहीं हो पा रहा है? प्रथमदृष्टया इसके सबसे बड़े दोषी तो राजनीतिक दल ही नजर आते हैं। राजनीतिक दल युवाओं को टिकट देने से परहेज करते हैं। टिकट दिया भी जाता है तो मुख्य रूप से उन्हीं को जिनकी राजनीतिक पारिवारिक पृष्ठभूमि या प्रभाव होता है। ऐसे में यदि चुनाव लड़ने के लिए न्यूनतम आयु सीमा घटाई जाएगी तो इसका एक बड़ा जोखिम यह होगा कि इससे हमारी राजनीतिक प्रणाली पर वंशवादी राजनीति का प्रभुत्व और बढ़ जाएगा। स्वाभाविक है कि राजनीति से युवाओं को जोड़ने की राह चुनाव लड़ने के लिए न्यूनतम आयु सीमा घटाने से होकर नहीं जाती, बल्कि इसके लिए राजनीतिक दलों को व्यापक रूप से अपना सोच-रवैया बदलना होगा।

यदि राजनीतिक दल वाकई राजनीति में युवाओं की भागीदारी बढ़ाने के लिए गंभीर हैं तो उन्हें कई स्तरों पर कदम उठाने होंगे। सबसे पहले तो सरकार को युवाओं को लेकर मापदंड बदलना होगा। अभी 34-35 वर्ष की आयु वालों को भी युवा माना जाता है। इस पैमाने को घटाना होगा। पार्टियों को अपने सांगठनिक ढांचे में युवाओं को अधिक जगह देनी होगी। अमूमन यह देखने में आता है कि बड़े-बड़े राजनीतिक दलों की युवा इकाइयों की बागडोर भी प्रौढ़ावस्था की दहलीज पर खड़े नेताओं के हाथ में होती है। राजनीतिक दलों को अपने छात्र संगठनों के लिए भी अधिकतम आयु की एक सीमा निर्धारित करनी होगी। बेहतर होगा कि उसमें 30 से अधिक आयु वालों को जगह न ही दी जाए। राजनीतिक दलों के साथ ही सिविल सोसायटी को यह उपाय भी करना होगा कि मतदान में युवाओं की भागीदारी बढ़ाई जाए। मतदान के रुझान यही बताते हैं कि 18 से 25 वर्ष की आयु वर्ग वाले उसमें उदासीनता दिखाते हैं। इसका एक प्रमुख कारण यह है कि इस आयु वर्ग के युवा या तो पढ़ाई या फिर नौकरी के सिलसिले में उस स्थान से बाहर होते हैं, जहां उनका नाम मतदाता सूची में होता है। केवल मतदान के लिए वे अपने मूल स्थान नहीं जा पाते। युवाओं का राजनीति से मोहभंग यहीं से आरंभ होता है। इसलिए राजनीतिक दलों और चुनाव आयोग को ऐसा कोई रास्ता निकालना होगा कि विभिन्न कारणों से अपने मूल स्थानों से बाहर रह रहे युवा बिना किसी गतिरोध के अपना मतदान कर सकें। जब युवा मतदान में सहभागी बनेंगे तो राजनीति को लेकर उनका रवैया भी गंभीर एवं संवेदनशील बनेगा। उनके भीतर नेतृत्व की नैसर्गिक भावना भी उत्पन्न होगी। पहले इस दिशा में प्रभावी उपाय किए जाएं, उसके बाद ही चुनाव लड़ने के लिए न्यूनतम आयु घटाने पर विचार करने की दिशा में आगे बढ़ा जाए।

पर्यावरण पर सामाजिक जवाबदेही

अजय जोशी

पर्यावरण प्रदूषण विश्व की विकराल और ज्वलंत समस्या है। माना जाता है कि पर्यावरण प्रदूषण में सर्वाधिक योगदान औद्योगिक इकाइयों का होता है। ये वायु, जल, थल और ध्वनि प्रदूषण की सबसे बड़ी कारक हैं। औद्योगिक इकाइयों द्वारा पर्यावरण संरक्षण के उपाय करने पर विशेष बल दिया जाता है। इस दृष्टि से कंपनियों के लिए 'एनवायरनमेंटल सोशल गवर्नेंस' (ईएसजी) यानी पर्यावरणीय सामाजिक शासन की अवधारणा विकसित हो रही है। विश्वभर की कंपनियां इस अवधारणा को स्वीकार कर रही हैं। इस अवधारणा की मान्यता है कि व्यवसाय को अपने सामाजिक उत्तरदायित्व का निर्वाह करते समय पर्यावरण संरक्षण की गतिविधियों पर विशेष ध्यान देना चाहिए और व्यवसाय अपने सामाजिक उत्तरदायित्वों का निर्वाह किस प्रकार कर रहा है, इसको पर्यावरण संरक्षण में योगदान के पैमाने पर मापा जाना चाहिए। हालांकि भारत के व्यावसायिक क्षेत्र के लिए यह अवधारणा नई है और इसके लिए बनाए गए कानून और दिशा-निर्देश भी अभी एकदम प्रारंभिक अवस्था में हैं।

पर्यावरणीय सामाजिक शासन यानी ईएसजी, ऐसे मानकों का समूह है, जो कंपनियों में बेहतर शासन, नैतिक प्रथाओं और परंपराओं का पालन, पर्यावरण के अनुकूल उपाय करने और पर्यावरण को नुकसान पहुंचाने वाले कारकों से बचने को बाध्य करता है। पर्यावरणीय मानदंड इस बात पर विचार करते हैं कि एक कंपनी के प्रबंध से जुड़े व्यक्ति प्रकृति के संरक्षण की दृष्टि से क्या कार्य करते हैं। कंपनी में निवेश करने वाले भी अपने निर्णय में कंपनी द्वारा की जाने वाली पर्यावरण संरक्षण संबंधी गतिविधियों को मद्देनजर रखते हैं।

भारत में कंपनी अधिनियम 2013 की धारा 135 के अंतर्गत निगमित सामाजिक उत्तरदायित्व की व्यवस्था को अनिवार्य किया गया है। अधिनियम की आठवीं अनुसूची में यह कहा गया है कि प्रत्येक कंपनी, जिसकी पिछले वर्ष कुल संपत्ति पांच सौ करोड़ या कारोबार एक हजार करोड़ या शुद्ध लाभ पांच करोड़ या इससे अधिक है, उसमें कंपनी को अपने शुद्ध लाभ की दो फीसद राशि निगमित सामाजिक उत्तरदायित्वों की गतिविधियों में खर्च करना अनिवार्य है।

इसमें पर्यावरण संरक्षण की गतिविधियां भी शामिल हैं। भारत में ईएसजी की आवश्यकता सर्वाधिक है, क्योंकि हमारे देश में वायु और जल प्रदूषण, वनों की कटाई तथा जलवायु परिवर्तन जैसी गंभीर पर्यावरणीय चुनौतियों के साथ ही हमें गरीबी, असमानता, भेदभाव तथा मानवाधिकारों के उल्लंघन जैसी सामाजिक चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है।

देश भर में उद्योगों में चिमनियों द्वारा विषैली गैसों का उत्सर्जन निरंतर होता रहता है। कई बार इस प्रकार का गैस उत्सर्जन भारी जान-माल के नुकसान का कारण बन जाता है। भोपाल गैस कांड इसका सबसे बड़ा उदाहरण है। भोपाल स्थित यूनियन कार्बाइड कंपनी के कारखाने से जहरीली गैस का रिसाव हुआ, जिससे लगभग पंद्रह हजार से अधिक लोगों की जान चली गई तथा बहुत सारे लोग अनेक तरह की शारीरिक अपंगता के शिकार हुए। भोपाल गैस कांड में मिथाइलआइसोसाइनेट नामक जहरीली गैस का रिसाव हुआ था। इस गैस का उपयोग कीटनाशक बनाने के लिए किया

जाता था। इसके पीड़ितों को वर्षों तक न्याय नहीं मिला। सन 2006 में सरकार ने दाखिल एक शपथ-पत्र में माना था कि इस रिसाव से करीब 5,58,125 लोग सीधे तौर पर प्रभावित हुए और आंशिक तौर पर प्रभावित होने वालों की संख्या लगभग 38,478 थी। इनमें 3900 लोग बुरी तरह प्रभावित हुए और पूरी अपंगता के शिकार हो गए। इसे मानव समाज को सबसे ज्यादा प्रभावित करने वाली औद्योगिक दुर्घटनाओं में गिना जाता है।

कारखानों की चिमनियों में गैस के अलावा बहुत से विषैले सूक्ष्म कण भी एकत्रित होते रहते हैं। वे भी वातावरण को प्रदूषित करते हैं। उद्योगों में उत्पादन के बाद राख, गंदा पानी और अन्य प्रकार के कचरे के रूप में बहुत से अपशिष्ट बच जाते हैं, जिनका सही ढंग से निपटारा न होने के कारण भी वातावरण प्रदूषित होता रहता है। उत्पादन के बाद काम में आए जल का बहिर्भाव जल प्रदूषण का सबसे बड़ा कारण है। सबसे पवित्र मानी जाने वाली गंगा नदी इस विकराल समस्या से सबसे ज्यादा प्रभावित हुई है। गंगा के साथ-साथ दूसरी नदियां, झरने, तालाब और अन्य जल स्रोत भी इसी कारण प्रदूषित होते जा रहे हैं। इन सबके चलते यह और भी जरूरी हो जाता है कि कंपनियां ईएसजी के प्रति गंभीरता दिखाएं।

इस विकराल होती समस्या के समाधान हेतु सरकारी स्तर पर प्रयास भी किए गए। इन्होंने प्रयासों के अंतर्गत सरकार ने 'सेबी' के माध्यम से कंपनियों में वर्ष 2012 से व्यावसायिक उत्तरदायित्व रपट को संचालकों की रपट का भाग बनाने की व्यवस्था की। इस व्यवस्था के अंतर्गत निर्धारित श्रेणियों की कंपनियों के लिए इस रपट को अनिवार्य किया गया था। 2015 में इस श्रेणी में आने वाली शीर्ष पांच सौ सूचीबद्ध संस्थाओं को सम्मिलित किया गया। 2021 में 'सेबी' ने विद्यमान रिपोर्टिंग की व्यवस्था को एक व्यापक एकीकृत तंत्र, व्यावसायिक उत्तरदायित्व और स्थिरता रपट के रूप में परिवर्तित किया। वित्तवर्ष 2022-23 से बाजार पूंजीकरण के आधार पर शीर्ष एक हजार सूचीबद्ध संस्थाओं के लिए यह रिपोर्टिंग व्यवस्था अनिवार्य करने की व्यवस्था की गई है। इसमें ईएसजी की गतिविधियों को अधिक प्रभावी ढंग से संचालित करने पर बल दिया गया है। इसके क्रियान्वयन में त्रुटि की दशा में कंपनी के संचालकों को उत्तरदायी ठहराने और दंडित करने की भी व्यवस्था की गई है।

अब जरूरत इस बात की है कि पर्यावरण संरक्षण के लिए ईएसजी व्यवस्था को कानूनी बाध्यता समझने के स्थान पर कंपनियां स्वयं अपनी नैतिक जिम्मेदारी समझें और इसके लिए सभी आवश्यक उपाय करें। कंपनियां अपने उत्पाद के निर्माण की प्रक्रिया में कम से कम पानी का उपयोग करने की तकनीकों का विकास करें और गंदे पानी की शोधन प्रक्रिया अपना कर उसको दुबारा उपयोग लायक बनाएं। निर्माण और पैकिंग की प्रक्रिया में पोलिथिन के प्रयोग को कम से कम करें। निर्माण प्रक्रिया में जो कचरा निकलता है, उसके पुनर्चक्रण की समुचित व्यवस्था करें। पेट्रोल, डीजल, कोयला आदि इंधनों पर आधारित उपकरणों और वाहनों के लिए हरित ऊर्जा साधनों और सौर ऊर्जा पर आधारित संसाधनों के प्रयोग को बढ़ाएं। अगर कंपनी द्वारा संचालित औद्योगिक संयंत्र के पास खाली स्थान है, तो वहां वृक्षारोपण करके परिसर के पर्यावरण को स्वच्छ रखने का प्रयास करना चाहिए।

कंपनियों को अपने निगमित सामाजिक दायित्व पर कानूनी रूप से जितनी राशि खर्च करनी है, उसका कम से कम पच्चीस फीसद पर्यावरण संरक्षण पर होने वाले शोधों और पर्यावरण संरक्षण के अन्य उपायों में खर्च करने का संकल्प लेना चाहिए। कंपनी के प्रभावी संचालन और नियम पालन में कंपनी सचिव और चार्टर्ड अकाउंटेंट जैसे पेशेवर व्यक्तियों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। ये दोनों पेशेवर व्यक्ति कंपनी के क्रियाकलापों में पर्यावरणीय प्रभाव का आकलन करने के लिए पर्यावरण आडिट कर सकते हैं। इसमें ऊर्जा खपत, अपशिष्ट प्रबंधन, जल उपयोग और कार्बन उत्सर्जन आदि का

मूल्यांकन शामिल है। ये इस संबंध में नियम पालन और किए जाने वाले व्यय की विस्तृत रपट तैयार करके कंपनी के प्रबंधन से जुड़े लोगों को अपनी सिफरिशों के साथ प्रस्तुत कर सकते हैं। इससे कंपनी को पर्यावरणीय सामाजिक शासन को प्रभावी ढंग से लागू करने में सहायता मिल सकती है।

जो कंपनियां स्वयं अपनी जिम्मेदारी का निर्वहन न करें, उनके प्रति सरकार कंपनी अधिनियम और पर्यावरण संरक्षण से जुड़े कानूनों के अंतर्गत दायित्व निर्वाह हेतु बाध्य करे। 'ईज आफ डूइंग बिजनेस' के नाम पर सरकारें कंपनियों को पर्यावरण प्रदूषण रोकथाम के उपाय न करने की कोई छूट न दें। कोई भी व्यावसायिक या आर्थिक गतिविधि मानव जीवन से बड़ी नहीं हो सकती, इसलिए पर्यावरण संरक्षण के लिए हर संभव प्रयास होते रहना जरूरी है।

राष्ट्रीय सहारा

Date:31-08-23

चीन की कुंठा

संपादकीय



भारत ने अरुणाचल प्रदेश और अक्साई चिन को चीन के नक्शे में दिखाए जाने के संबंध में पड़ोसी देश के दावों को 'आधारहीन' बताते हुए सिरे से इन्हें खारिज कर दिया। कहा है कि चीनी पक्ष के ऐसे कदम सीमा से जुड़े विषय को जटिल बनाएंगे। विदेश मंत्रालय के प्रवक्ता अरिंदम बागची ने कहा है कि चीन फ्रस्टेट होकर ऐसा प्रोपेगेंडा फैला रहा है। चीन ने दो दिन पहले अपने 'मानक मानचित्र' का 2023 का जो संस्करण आधिकारिक रूप से जारी किया है, जिसमें अरुणाचल प्रदेश, अक्साई चिन, ताइवान और विवादित दक्षिण चीन सागर को भी दर्शाया है। दरअसल, चीन के लिए इस तरह का शरारतपूर्ण आचरण नया नहीं है, वह आदतन अन्य देशों से संबंधित क्षेत्रों का नाम बदलने और उनके मानचित्रों को फिर से बनाने

जैसी खुराफात करता रहता है। यही कारण है कि उसके तमाम पड़ोसी देशों के साथ उसका सीमा पर तनाव और टकराव बना रहता है। उसकी प्रवृत्ति तमाम देशों पर दबदबा बनाने की रही है, और वह ऐसा कोई भी मौका नहीं चूकता जो किसी पक्ष खासकर उसके दबाव में न आने वाले पक्ष को परेशान करने वाला हो। जिस प्रकार उसने अपना मानचित्र जारी किया है, उससे लगता है कि उसकी भारत के साथ संबंधों को सहज बनाने में रुचि नहीं है, और लद्दाख क्षेत्र में सीमा पर भारत के साथ सहज स्थिति बनाए रखने वार्ता प्रयास बेमानी हैं। भारत के लिए जरूरी हो गया है कि चीन के साथ अपने संबंधों को सहज बनाने के लिए आग्रही न बना रहे। जरूरी हो गया है कि भारत तिब्बत के मसले पर ज्यादा से ज्यादा मुखर हो। ताइवान के मसले पर भी खुलकर सामने आए। तिब्बत और ताइवान के मसले पर चीन अन्य देशों खासकर भारत जैसे पड़ोसी देश के रुख को भांप कर एंठ दिखा है। भारत को अपने कूटनय में आक्रामकता लानी होगी। चीन अपने नक्शे में भारत के क्षेत्रों को दिखा कर तनाव पैदा करने की कोशिश करे और भारत उसके रवैये का तीखा विरोध भर दर्ज करा दे, इससे काम नहीं चलेगा। ऐसी मीडिया रिपोर्टें मिलने लगी हैं, जिनमें चीन की अर्थव्यवस्था के शिथिल

पड़ने के संकेत मिलते हैं, और कोरोना महामारी से भी वह कायदे से अभी तक उबर नहीं पाया है। लेकिन गुर्गा कर यह माहौल बनाने में सफल हुए जा रहा है कि वह बड़ी महाशक्ति है, और कोई भी देश अपनी विदेश नीति में उसे असहज करने की जुर्रत न करे। लेकिन खोखला होती अपनी अर्थव्यवस्था की वास्तविक स्थिति ज्यादा छिपाए नहीं रख पाएगा।

Date:31-08-23

संसद में घटती चर्चा

राजकुमार सिंह

संसद लोकतंत्र का सर्वोच्च मंदिर है, पर क्या उसकी मर्यादा लगातार भंग नहीं की जा रही? भारतीय संसदीय लोकतंत्र के तीन स्तंभ माने गए हैं: विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका, पर संसद की सर्वोच्चता का शोर किसी से छिपा नहीं है पर क्या माननीय सांसद ही संसद की गरिमा और मर्यादा से खिलवाड़ नहीं कर रहे? कभी यूपीए सरकार ने बताया था कि संसद की एक मिनट की कार्यवाही पर लगभग ढाई लाख रुपये खर्च होते हैं। उसके बाद यह खर्च और माननीयों के वेतन-भत्ते-सुविधाओं पर होने वाला खर्च बढ़ा ही है। फिर ऐसा क्यों है कि संसद की उत्पादकता लगातार घटती जा रही है? संसद से मुख्यतः तीन कार्य अपेक्षित हैं: एक, गंभीर चर्चा के बाद विधेयक पारित कर जरूरी कानून बनाना, दो, जनहित के मुद्दों पर चर्चा करते हुए सरकार की जवाबदेही तय करना, और तीन, प्रश्नकाल-ध्यानाकर्षण आदि प्रावधानों के जरिए महत्वपूर्ण विषय उठाते हुए उन पर चर्चा करना। हमारी संसद अब इन तीनों ही कसौटियों पर खरी नहीं उतर पा रही।

पिछले दिनों समाप्त हुआ संसद का मानसून सत्र किस तरह सत्ता पक्ष और विपक्ष की राजनीतिक रस्साकशी का शिकार हो गया-सभी जानते हैं, पर ऐसा पहली बार नहीं हुआ। इसी साल बजट सत्र भी सत्ता पक्ष और विपक्ष के राजनीतिक दांव-पेंचों की भेंट चढ़ गया था। बजट सत्र भारतीय संसदीय लोकतंत्र के सात दशक के इतिहास में सबसे कम उत्पादकता वाला सत्र रहा। अपनी जिम्मेदारी-जवाबदेही के प्रति हमारी संसद की गंभीरता का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि केंद्रीय बजट तक बिना चर्चा पारित कर दिया गया। अतीत में झाँकेंगे तो पाएंगे कि देश-समाज पर दूरगामी गंभीर असर डालने वाले कृषि और श्रम कानून संशोधन विधेयक तक हमारी संसद ने बिना चर्चा पारित कर दिए थे।

दरअसल, अब संसद चलती कम है, बाधित ज्यादा होती है। यह गंभीर लोकतांत्रिक संकट है, पर सत्ता पक्ष और विपक्ष एक-दूसरे पर ठीकरा फोड़ते हुए अपनी-अपनी भूमिकाओं की इतिश्री कर लेते हैं। ऐसे में देर-सबेर महंगी संसद की प्रासंगिकता पर ही सवाल उठने की आशंका से इनकार नहीं किया जा सकता, पर लगता है कि अपनी सर्वोच्चता और विशेषाधिकार के प्रति संवेदनशील हमारे माननीयों को उसकी भी चिंता नहीं है। संसद की घटती बैठकों पर अरसे से चिंता जताई जाती रही है, लेकिन हालात सुधारने की बजाय बिगड़ते जा रहे हैं। पीआरएस लेजिस्लेटिव रिसर्च संसद के कामकाज पर नजर रखने वाली संस्था है। उसके आंकड़े बताते हैं कि 1952 से 70 तक लोक सभा की सालाना औसतन 120 दिन बैठकें होती थीं, लेकिन पिछले साल ये घट कर मात्र 56 दिनों पर आ गई। जाहिर है, अपनी संवैधानिक जिम्मेदारी-जवाबदेही के प्रति संसद की सक्रियता में यह गिरावट अचानक नहीं आई। यह प्रवृत्ति लगातार दिखाई पड़ती है। 120 दिनों के औसत से लोक सभा की बैठकें 15वीं लोक सभा (2009-14) में 63 पर आ गई। अगली लोक सभा (2014-19)

में यह आंकड़ा थोड़ा बेहतर हो कर 66 पर पहुंचा पर वर्तमान लोक सभा सबसे कम उत्पादकता वाली लोक सभा का कीर्तिमान बनाने की ओर अग्रसर है।

अन्य लोकतांत्रिक देशों की संसद से तुलना करें तो भारतीय संसद की घटती बैठकें हमारे माननीय सांसदों की लोकतंत्र के प्रति गंभीरता पर सवालिया निशान लगा देती हैं। ब्रिटेन की संसद साल में औसतन 150 दिन बैठक करती है तो अमेरिकी कांग्रेस की भी साल में 100 दिन से ज्यादा बैठकें होती हैं। विडंबना यह है कि भारतीय संसद का संकट घटती बैठकों तक ही सीमित नहीं है। कम बैठकों में होने वाला काम भी कम होता जा रहा है। संसदीय कामकाज के प्रति गंभीरता पर दलगत राजनीति भारी पड़ रही है और सत्र-दर-सत्र संसद राजनीतिक अखाड़ा बनी नजर आती है। अक्सर विपक्ष पर संसद न चलने देने के आरोप लगाए जाते हैं। विपक्ष भी कह देता है कि सदन चलाना सत्ता पक्ष की जिम्मेदारी है, जबकि सच यह है कि दोनों पक्षों के सकारात्मक रुख से ही यह संभव हो सकता है। यूपीए शासनकाल में अक्सर किसी न किसी मुद्दे पर संसद में होने वाले गतिरोध को उचित ठहराते हुए भाजपा नेता सुषमा स्वराज और अरुण जेटली उसे भी विपक्ष की संसदीय रणनीति का जायज अंग बताते थे, पर पिछले बजट सत्र में खुद सत्ता पक्ष सदन की कार्यवाही बाधित करते देखा गया।

कई बार लगता है कि सब कुछ एक रणनीति के तहत होता है : विपक्ष किसी खास नियम के तहत कोई मुद्दा उठाना चाहता है, आसन अनुमति नहीं देता। परिणामस्वरूप हंगामा होता है, विपक्ष वॉकआउट कर जाता है, और उसी समय सत्ता पक्ष विधेयक आदि पारित करने का अपना विधायी काम निपटा लेता है। जरा याद करिए कि किस तरह 2021 के मानसून सत्र को पेगासस जासूसी कांड का ग्रहण लगा था, जिससे लोक सभा और राज्य सभा की उत्पादकता क्रमशः 14 और 22 प्रतिशत तक सिमट गई थी। तब मात्र 44 मिनट में पांच विधेयक पारित कर दिए गए थे। उनमें किशोर न्याय (बच्चों की देखभाल और संरक्षण) संशोधन विधेयक, 2021 भी शामिल था, जिसे सिर्फ 18 मिनट में पारित कर दिया गया।

पिछले दिनों समाप्त मानसून सत्र भी अपवाद नहीं। मणिपुर पर चर्चा के लिए नियम संबंधी विवाद का ऐसा साया पड़ा कि राजनीतिक रूप से संवेदनशील अविास प्रस्ताव तथा राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली सरकार (संशोधन) विधेयक, 2023 के अलावा किसी विधेयक पर गंभीर चर्चा नहीं हुई, जबकि डिजिटल व्यक्तिगत डेटा संरक्षण, वन संरक्षण संशोधन तथा खान एवं खनिज (विकास एवं विनियमन) समेत 23 विधेयक पारित हुए। आईआईएम (संशोधन) और अंतर सेवा संगठन समेत नौ विधेयक लोक सभा ने 20 मिनट में पारित कर दिए तो राज्य सभा ने तीन दिन में 10 विधेयक पारित कर दिए। विधेयकों पर संसद में चर्चा तो कम हो ही रही है, गंभीर चर्चा के लिए उन्हें संसदीय समितियों को भेजने की परंपरा भी पीछे छूट रही है। 15वीं लोक सभा में 71 प्रतिशत विधेयक संसदीय समितियों को भेजे जाते थे। 16वीं लोक सभा में यह प्रतिशत घट कर 27 पर आ गया और वर्तमान लोक सभा में 13 प्रतिशत ही है। आजादी के अमृतकाल में इस चिंताजनक तस्वीर पर भी संसद और माननीय सदस्यों को आत्मचिंतन करना चाहिए। राजनीति देश के लिए करनी चाहिए, देश के साथ नहीं।